

दिल्ली उच्च न्यायालय : नई दिल्ली

सिविल वाद (मूल पक्ष) 217/2021, अंतर्वर्ती आवेदन 5406/2021 और
अंतर्वर्ती आवेदन 1736/2022
CS(OS) 217/2021, I.A. 5406/2021 and I.A. 1736/2022

निर्णय तिथि: 13.02.2025

के मामले में:

सुमित्रा

..... वादी

द्वारा:

श्री नितिन, श्री अनस, श्री प्रदन्या,
श्री एबाद उर रहमान, श्री अभिनंद,
श्री मासूम और श्री ज़ैनब,
अधिवक्तागण

बनाम

गंगा राम और अन्य

.....प्रतिवादीगण

द्वारा:

श्री विशाल मान और श्री आर.एस.
वर्मा, प्र-1 और 3 के अधिवक्ता

माननीय न्यायमूर्ति श्री पुरुषेंद्र कुमार कौरव

निर्णय

न्या., पुरुषेंद्र कुमार कौरव (मौखिक)

अंतर. आ. 1736/2022 (प्रतिवादी सं. 1 और 3 द्वारा सी.पी.सी. के आदेश VII नियम 11 के तहत)

1. वर्तमान आवेदन प्रतिवादी संख्या 1 और 3 द्वारा सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश VII नियम 11 के तहत दायर किया गया है।
2. आवेदक-प्रतिवादी संख्या 1 और 3 की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता प्रस्तुत किए कि वर्तमान सिविल मुकदमा कानून द्वारा वर्जित है, क्योंकि मांगी गई राहत दिल्ली भूमि सुधार अधिनियम, 1954 (जिसे यहाँ आगे डी.एल.आर. अधिनियम कहा गया है) की धारा 50 के प्रावधानों को देखते हुए पोषणीय नहीं है।
3. विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि यह एक निर्विवाद तथ्य है कि वादी के पिता, श्री उदामी राम, जिनका निधन 12.10.1991 को हुआ था, वादपत्र के पैराग्राफ संख्या 2(ए) और 2(बी) में उल्लिखित कृषि भूमि के पंजीकृत भूमिदार थे।
4. उन्होंने निवेदन किया कि श्री उदामी राम के निधन के बाद, उक्त कृषि भूमि का उत्तराधिकार उनके पाँच पुत्रों, अर्थात् प्रतिवादी संख्या 1, 2, 3 और 7, तथा श्री सुरेंद्र सिंह, जो कि प्रतिवादी संख्या 9 के पिता हैं, के पक्ष में किया गया। श्री सुरेंद्र सिंह की मृत्यु के बाद, उनके कानूनी उत्तराधिकारी, प्रतिवादी संख्या 9, ने डी.एल.आर. अधिनियम की धारा 50 के अनुसार उनके हिस्से पर

अधिकार प्राप्त किया, जिसके लिए राजस्व अभिलेखों में विधिवत रूप से संबंधित दाखिल-खारिज दर्ज किया गया।

5. उन्होंने आगे कहा कि चूँकि प्रश्नगत संपत्तियों का उत्तराधिकार 1991 में हुआ था, इसलिए यह पूरी तरह से डी.एल.आर. अधिनियम की धारा 50 द्वारा शासित था, क्योंकि हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 के प्रावधान उस समय उक्त अधिनियम की धारा 4(2) के अधीन थे, जिसने कृषि भूमि स्वामित्व को नियंत्रित करने वाले कानूनों के लागू होने को बरकरार रखा था। उन्होंने आगे कहा कि हिंदू उत्तराधिकार (संशोधन) अधिनियम, 2005, जिसमें हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 की धारा 4(2) को हटा दिया गया था, उस समय लागू नहीं था जब वाद संपत्ति के उत्तराधिकार का निर्धारण किया गया था। इसलिए, उनका तर्क है कि वर्तमान मामले में कृषि भूमि का हस्तांतरण पूरी तरह से डी.एल.आर. अधिनियम द्वारा नियंत्रित था, जो अपने आप में एक संपूर्ण संहिता है। अपने इस प्रतिपादना के समर्थन में, वे **राम मेहर बनाम दखन¹** और **हट्टी बनाम सुंदर सिंह²** के निर्णयों पर भरोसा किए हैं।

6. विद्वान अधिवक्ता ने डी.एल.आर. अधिनियम के प्रावधानों को उल्लेख करते हुए कहा कि 1954 में अधिनियम के लागू होने के साथ ही कृषि भूमि में सभी स्वामित्व अधिकार समाप्त हो गए और केवल काश्तकार के अधिकारों को ही मान्यता दी गई थी। उनका तर्क है कि इसी कारण से **भूमिधर** और **असामी**

¹ 1972 SCC ऑनलाइन दिल. 64

² (1970) 2 एस.सी.सी. 841

शब्दों का प्रयोग कृषि भूमि के स्वामी के बजाय उसके पट्टेदारों के लिए विशेष रूप से किया जाता था। इस पहलू को प्रमाणित करने के लिए वे **नाथू बनाम हुकम सिंह**³ मामले में दिए गए निर्णय पर भरोसा किए हैं।

7. इसके अतिरिक्त, उनका तर्क है कि डी.एल.आर. अधिनियम अपने ढांचे के भीतर संयुक्त हिंदू परिवार या हिंदू अविभाजित परिवार (एच यू एफ) संपत्तियों की अवधारणा को मान्यता नहीं देता है, क्योंकि उक्त अधिनियम विशेष रूप से कृषि भूमि में किरायेदारी अधिकारों के हस्तांतरण को नियंत्रित करता है। अपने तर्क समर्थन में, वे **बृज नारायण अग्रवाल बनाम अनूप कुमार गोयल**⁴ के निर्णय पर भरोसा किए हैं।

8. आवेदकों के विद्वान अधिवक्ता ने **इंदु रानी बनाम पुष्पा**⁵ और **नरेश कुमार बनाम तदबीर सिंह**⁶ में इस न्यायालय के निर्णयों पर भरोसा करते हुए तर्क दिए कि डी.एल.आर. अधिनियम की धारा 50 के तहत वंशजों के अधिकार स्पष्ट थे और हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 की धारा 4 की उपधारा (2) को बाद में हटाए जाने से अप्रभावित रहे।

9. विद्वान अधिवक्ता ने आगे यह भी कहा कि **विनीता शर्मा बनाम राकेश शर्मा** के मामले में उच्चतम न्यायालय का निर्णय वर्तमान मामले पर लागू

³ 1981 एस.सी.सी. ऑनलाइन दिल्. 345

⁴ 2007 एस.सी.सी. ऑनलाइन दिल्. 924

⁵ (2022) 6 एच.सी.सी. (दिल्.) 661

⁶ 2024 एस.सी.सी. ऑनलाइन दिल्. 5755

⁷ (2020) 9 एस.सी.सी. 1

नहीं होता है, क्योंकि वाद संपत्तियां संयुक्त हिंदू परिवार (जे.एच.एफ) संपत्तियों की श्रेणी में नहीं आती हैं। उनका तर्क है कि चूँकि प्रश्नगत संपत्तियां कृषि भूमि हैं जो विशेष रूप से डी.एल.आर. अधिनियम द्वारा शासित हैं, इसलिए हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 के प्रावधान, जिनमें विनीता शर्मा मामले में दिए गए कानून की व्याख्या भी शामिल है, लागू नहीं होते हैं।

10. वे इस बात पर जोर दिए कि कृषि भूमि हस्तांतरण अधिनियम कृषि भूमि के हस्तांतरण के लिए एक विशिष्ट वैधानिक ढांचा प्रदान करता है, जो सामान्य हिंदू कानून सिद्धांतों को अभिभावी (ओवरराइड) करता है। नतीजतन, **विनीता शर्मा** पर भरोसा करना, जो संयुक्त हिंदू परिवार की संपत्ति में बेटियों के सहदायिक अधिकारों से संबंधित है, वर्तमान मामले में अनुचित है।

11. वादपत्र में उल्लिखित संपत्ति 2(ग) के संबंध में, विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि वादी उक्त संपत्ति को आवासीय संपत्ति के दायरे में साबित करने वाला कोई दस्तावेजी साक्ष्य प्रस्तुत करने में विफल रहा है या यह साबित करने वाला कोई संबंध दर्शाने में विफल रहा है कि संपत्ति कभी स्वर्गीय श्री उदामी राम के स्वामित्व में थी। उन्होंने तर्क दिया कि किसी पक्षकार द्वारा उत्तराधिकार के अधिकार के रूप में संपत्ति के विभाजन की मांग करने के लिए, पहले संपत्ति में पूर्ववर्ती के स्वामित्व या हित को साबित करना अनिवार्य है।

12. विद्वान अधिवक्ता ने आगे यह भी कहा कि वादी ने अस्पष्ट रूप से आरोप लगाया है कि प्रतिवादी स्वर्गीय श्री उदामी राम के सहदायिक, वंशज और

कानूनी उत्तराधिकारी हैं और दिल्ली के सफ़ीपुर रानहोला के शहरीकृत क्षेत्र में स्थित अचल संपत्ति के संयुक्त स्वामी हैं। उनका तर्क है कि सहदायिकों, वंशजों और कानूनी उत्तराधिकारियों के बीच स्पष्ट कानूनी अंतर है। वादी ने इन अलग-अलग अवधारणाओं को आपस में मिला दिया है। उनका तर्क है कि सहदायिक अधिकार केवल संयुक्त हिंदू परिवार की संपत्ति के संदर्भ में ही उत्पन्न होते हैं, और वर्तमान मामले में, वादी संयुक्त हिंदू परिवार या हिंदू अविभाजित परिवार की संपत्ति के अस्तित्व को साबित करने में विफल रहा है।

13. उनका तर्क है कि संपत्ति 2(ग) पर स्वर्गीय श्री उदामी राम के स्वामित्व या सहस्वामित्व का कोई प्रमाण न होने के कारण विभाजन अधिकार का दावा करने का प्रश्न ही नहीं उठता। उनका कहना है कि मात्र गाँव में स्थित होने से वह संपत्ति स्वतः ही सह स्वामित्व वाली संपत्ति नहीं बन जाती, विशेषकर तब जब वादी ने वाद संपत्ति और स्वर्गीय श्री उदामी राम के बीच कोई दस्तावेजी संबंध नहीं दिखाया है।

14. विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि यह स्वीकार्य रूप से एक पुरानी आवासीय आबादी है, और कोई भी आबादी या विस्तारित आबादी डी.एल.आर. अधिनियम की धारा 3(12) के तहत शासित होती है। इस तर्क के समर्थन में, विद्वान अधिवक्ता **सुभद्रा बनाम सुरेंद्र सिंह**⁸ के मामले में इस न्यायालय के निर्णय पर भरोसा किया है।

⁸ 2016 एस.सी.सी. ऑनलाइन दिल्. 1927

15. प्रतिवादी संख्या 1 और 3 के विद्वान अधिवक्ता द्वारा प्रस्तुत दलीलों का वादी की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने पुरजोर विरोध किया है।
16. वादी के विद्वान अधिवक्ता ने प्रतिवादियों के विद्वान अधिवक्ता द्वारा दिए गए तर्कों को पूरी तरह से खारिज करते हुए तर्क दिया कि यह आवेदन भ्रामक और गुणागुण से रहित है, और इसलिए इसे खारिज किया जाना चाहिए। उनका तर्क है कि यदि बिना किसी पूर्वाग्रह के यह मान भी लिया जाए कि संपत्ति 2(क) कृषि भूमि है, तो भी संपत्ति 2(ख) और 2(ग) आवासीय प्रकृति की ही रहेंगी। नतीजतन, इन संपत्तियों के संबंध में मुकदमा पोषणीय है।
17. अपने तर्क के समर्थन में, विद्वान अधिवक्ता ने **गीता बनाम नंजुंडास्वामी⁹** के मामले में उच्चतम न्यायालय के फैसले पर भरोसा करते हुए तर्क दिया कि सी.पी.सी. के आदेश VII नियम 11 के तहत शक्ति का प्रयोग करते हुए, किसी वादपत्र को आंशिक रूप से खारिज नहीं किया जा सकता है।
18. उनका तर्क है कि हिंदू उत्तराधिकार (संशोधन) अधिनियम, 2005, अपने क्रियान्वयन में पुर्वेक्षित है और प्रश्नगत कृषि भूमि स्वर्गीय श्री उदामी राम के पुरुष वंशजों द्वारा दिल्ली भूमि सुधार अधिनियम की धारा 50 के तहत विरासत में मिली थी। उन्होंने प्रस्तुत किया कि 2005 के संशोधन अधिनियम से पहले, दिल्ली भूमि सुधार अधिनियम के वे प्रावधान, जो हिंदू उत्तराधिकार

⁹ 2023 एस.सी.सी. ऑनलाइन एस.सी. 1407

अधिनियम, 1956 के साथ असंगत थे, केवल हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 4 के आधार पर ही संरक्षित किए गए थे।

19. उन्होंने आगे तर्क दिया कि चूँकि 2005 के संशोधन अधिनियम को पूर्वव्यापी रूप से लागू माना गया है और हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 की धारा 4 को हटा दिया गया है, इसलिए डी.एल.आर. अधिनियम की धारा 50 के प्रावधान निष्क्रिय हो गए हैं और उनका कोई कानूनी महत्व नहीं है। नतीजतन, संशोधन से पहले केवल पुरुष वंशजों के पक्ष में की गई कोई भी उत्तराधिकार प्रक्रिया या राजस्व प्रविष्टियाँ कानूनी रूप से मान्य नहीं हैं। उन्होंने कहा कि हिंदू परिवार में जन्म लेने के कारण, बेटियाँ अब बेटों के साथ संपत्ति में बराबर हिस्से की हकदार हैं, और इसलिए, स्वर्गीय श्री उदामी राम की संपत्ति, जो कि बिना वसीयत के उत्तराधिकार के माध्यम से प्राप्त हुई है, उनके सभी बेटों और बेटियों के बीच समान रूप से विभाजित की जानी चाहिए। विद्वान अधिवक्ता अपने तर्क को साबित करने के लिए *विनीता शर्मा* पर भरोसा किए हैं।

20. मैंने पक्षकारों की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता द्वारा की गई दलीलों पर विचार किया है और रिकार्ड का अवलोकन किया है।

21. यह एक सुस्थापित सिद्धांत है कि सी.पी.सी. के आदेश VII नियम 11 के तहत किसी वादपत्र को आंशिक रूप से खारिज नहीं किया जा सकता है। उच्चतम न्यायालय ने *गीता बनाम नंजुंडास्वामी* मामले में इस सिद्धांत को

दोहराते हुए अभिनिर्धारित किया कि वादपत्र को या तो पूरी तरह से खारिज किया जाना चाहिए या बिल्कुल भी नहीं। उक्त निर्णय का प्रासंगिक भाग इस प्रकार है:-

“12. उच्च न्यायालय का निर्णय संधारणीय नहीं होने का एक और कारण है। सी.पी.सी. के आदेश VII नियम 11 के तहत दायर आवेदन में वादपत्र को आंशिक रूप से खारिज नहीं किया जा सकता। यह सिद्धांत सुस्थापित है और 1936 में मकसूद अहमद बनाम मथुरा दत्त एंड कंपनी⁴ के फैसले के बाद से लगातार इसका पालन किया जा रहा है। इस सिद्धांत को इस न्यायालय के हालिया निर्णय सेजल ग्लास लिमिटेड बनाम नवलान मर्चेन्ट्स (पी) लिमिटेड,⁵ में भी स्पष्ट किया गया है, जिसका अनुसरण माधव प्रसाद अग्रवाल बनाम एक्सिस बैंक लिमिटेड⁶ में भी किया गया था। माधव प्रसाद (पूर्वोक्त) का प्रासंगिक अंश नीचे दिया गया है:

“10. हम अन्य सभी तर्कों पर विस्तार से चर्चा करना आवश्यक नहीं समझते हैं क्योंकि हम अपीलार्थी(गण) की इस आपति को स्वीकार करने के लिए इच्छुक हैं कि आदेश 7 नियम 11(डी) सी.पी.सी. के तहत शक्तियों का प्रयोग करते हुए वादपत्र को खारिज करने की राहत केवल प्रतिवादी(गण) में से किसी एक के संबंध में नहीं मांगी जा सकती है। दूसरे शब्दों में कहें तो, सी.पी.सी. के आदेश 7 नियम 11(घ) के तहत प्राप्त शक्ति का प्रयोग करते हुए, वादपत्र को या तो पूरी तरह से खारिज किया जाना चाहिए या बिल्कुल भी खारिज नहीं किया जाना चाहिए। वास्तव में, विद्वान एकल न्यायाधीश ने उसी उच्च न्यायालय की खंडपीठ के निर्णय पर भरोसा करते हुए अपीलार्थी(गण) द्वारा उठाई गई इस आपति को खारिज कर दिया। हालाँकि, हम पाते हैं कि सेजल ग्लास लिमिटेड [सेजल ग्लास लिमिटेड बनाम नवलिन मर्चेन्ट्स (पी) लिमिटेड, (2018) 11 एस.सी.सी. 780 : (2018) 5 एस.सी.सी. (सिविल) 256] में इस न्यायालय का निर्णय सीधे तौर पर इसी मुद्दे पर आधारित है। उस मामले में,

प्रतिवादी(गण) द्वारा आदेश 7 नियम 11(डी) सी.पी.सी. के तहत एक आवेदन दायर किया गया था जिसमें कहा गया था कि वादपत्र में किसी भी वाद हेतुक का खुलासा नहीं किया गया है। सिविल न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि वादपत्र को दो भागों में विभाजित किया जाना चाहिए क्योंकि इसमें निदेशक के प्रतिवादी (2 से 4) के विरुद्ध किसी भी वाद हेतुक का खुलासा नहीं किया गया है। इसी आधार पर, उच्च न्यायालय ने राय दी कि मुकदमा केवल प्रतिवादी 1 कंपनी के विरुद्ध ही जारी रह सकती है। इस न्यायालय द्वारा विचार किया गया प्रश्न यह था कि क्या सी.पी.सी. के आदेश 7 नियम 11 (घ) के तहत शक्तियों का प्रयोग करते हुए ऐसा कोई मार्ग सिविल न्यायालय के लिए खुला है। न्यायालय ने इस मुद्दे पर कई निर्णयों को स्वीकार करते हुए उक्त प्रश्न का नकारात्मक उत्तर दिया, जिसमें लगातार अभिनिर्धारित किया गया था कि वादपत्र को या तो पूरी तरह से खारिज किया जा सकता है या बिल्कुल भी नहीं। न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि वादपत्र के किसी विशेष भाग, जिसमें कुछ प्रतिवादी(गण) के विरुद्ध वादपत्र शामिल है, को खारिज करना और अन्य के विरुद्ध वादपत्र जारी रखना अनुमेय नहीं है। न्यायालय ने स्पष्ट रूप से कहा है कि यदि वादपत्र कुछ प्रतिवादी(गण) और/या संपत्तियों के विरुद्ध मान्य रहता है, तो सी.पी.सी. का आदेश 7 नियम 11(घ) बिल्कुल भी लागू नहीं होगा, और ऐसे में पूरे मुकदमे की विचारण कार्यवाही होनी चाहिए।”

22. अतः, वादी द्वारा उक्त निर्णय पर भरोसा करना उचित है। न्यायालय वादी के इस तर्क से सहमत है कि वादपत्र को आंशिक रूप से खारिज नहीं किया जा सकता है, और मुकदमे पर समग्र रूप से विचार किया जाना चाहिए।

23. इससे न्यायालय वर्तमान मामले के मूल मुद्दे पर आता है, अर्थात्, क्या विषयगत विभाजन वाली तीनों संपत्तियों को डी.एल.आर. अधिनियम की प्रयोज्यता के लिए कृषि संपत्तियों के रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है।

24. इस प्रश्न पर विचार करने से पहले, यह ध्यान देने योग्य है कि श्री उदामी राम का निधन 12.10.1991 को हो गया था। इस न्यायालय की समन्वय पीठ ने **इंदु रानी** मामले में लगभग समान तथ्यात्मक परिस्थिति की जाँच की और उक्त निर्णय के पैराग्राफ 22 में यह अभिनिर्धारित किया कि हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 4 की उपधारा (2) का निरसन पूर्वव्यापी प्रभाव नहीं रखता है। न्यायालय ने स्पष्ट रूप से अभिनिर्धारित किया कि डी.एल.आर. अधिनियम की धारा 50 के तहत निर्धारित उत्तराधिकार का नियम उन मामलों पर लागू होगा जहाँ उत्तराधिकार 09.09.2005 से पहले शुरू हो चुका था। आगे यह स्पष्ट किया गया कि ऐसे मामलों में, पुरुष कानूनी उत्तराधिकारियों को वाद भूमि में **भूमिदारी** अधिकार प्राप्त होंगे, और बाद में किए गए विधायी संशोधन से इन निहित अधिकारों में कोई परिवर्तन नहीं होगा। निर्णय का प्रासंगिक भाग इस प्रकार है:-

“22. वर्तमान मामला पूरी तरह से हर नारायणी देवी मामले [हर नारायणी देवी बनाम भारत संघ 2022 एस.सी.सी. ऑनलाइन एससी 1265] के उपरोक्त आदेश द्वारा पूरी तरह से कवर किया गया है। वर्तमान मामले में, वादी के पिता का निधन 1993 में हुआ था, जबकि हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 4 की उपधारा (2) अभी भी लागू थी। वाद भूमि के संबंध में हित का हस्तांतरण वादी के पिता

की मृत्यु के समय प्रचलित कानून के अनुसार निर्धारित किया जाएगा। इसलिए, डी.एल.आर. अधिनियम की धारा 50 के अनुसार उत्तराधिकार का नियम इस मामले में लागू होगा और वादी के भाई वाद भूमि में अपने पिता के भूमिदारी अधिकारों में हिस्सा प्राप्त करेंगे। हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 4 की उपधारा (2) को बाद में हटाए जाने से इस पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा।”

25. **विनीता शर्मा** मामले में दिए गए निर्णय में भी स्पष्ट रूप से कहा गया है कि हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम में संशोधन पूर्वव्यापी नहीं बल्कि केवल पूर्वव्यापी प्रकृति के हैं। फैसले का प्रासंगिक अंश इस प्रकार है:-

“61. पूर्वक्षित कानून अधिनियमित होने की तिथि से प्रभावी होता है और नए अधिकार प्रदान करता है। पूर्वव्यापी कानून पूर्वव्यापी रूप से प्रभावी होता है और मौजूदा कानूनों के तहत अर्जित निहित अधिकारों को छीन लेता है या बाधित करता है। पूर्वव्यापी कानून वह होता है जो पूर्वव्यापी रूप से प्रभावी नहीं होता है। यह भविष्य में लागू होता है। हालाँकि, इसकी क्रियाशीलता पहले उत्पन्न हुई स्थिति या चरित्र पर आधारित होती है। यह अतीत में घटी किसी घटना या विशेषता पर या पूर्ववर्ती घटनाओं से प्राप्त आवश्यकताओं पर आधारित होती है। संशोधित धारा 6 के तहत, चूँकि अधिकार जन्म से प्राप्त होता है, यानी एक पूर्ववर्ती घटना से, और प्रावधान संशोधन अधिनियम की तारीख से अधिकारों का दावा करने के संबंध में लागू होते हैं।

62. पूर्वव्यापी और पूर्व प्रभावी कानून की अवधारणा को इस न्यायालय ने दर्शन सिंह बनाम राम पाल सिंह [दर्शन सिंह बनाम राम पाल सिंह, 1992 पूरक (1) एस.सी.सी. 191] में इस प्रकार बताया था: (एस.सी.सी. पृष्ठ 211-13, पैराग्राफ 35-37)

“35. श्री सच्चर गोकल चंद बनाम परवीन कुमारी [गोकल चंद बनाम परवीन कुमारी, (1952) 1 एस.सी.सी. 713: ए.आई.आर. 1952 एससी 231], गरिकापति वीराया बनाम एन. सुब्बैया चौधरी [गरिकापति वीराया बनाम एन. सुब्बैया

चौधरी, ए.आई.आर. 1957 एस.सी. 540], जोस दा कोस्टा बनाम बास्कोरा सदाशिव सिनाई नारकोर्निम [जोस दा कोस्टा बनाम बासकोरा सदाशिव सिनाई नारकोर्निम, (1976) 2 एस.सी.सी. 917], गोविंद दास बनाम सी.आई.टी. [गोविंद दास बनाम सी.आई.टी., (1976) 1 एस.सी.सी. 906 : 1976 एस.सी.सी. (टैक्स) 133], हेंशाल बनाम पोर्टर [हेंशाल बनाम पोर्टर, (1923) 2 केबी 193], संयुक्त प्रांत बनाम अतिका बेगम [संयुक्त प्रांत बनाम अतिका बेगम, 1940 एस.सी.सी. ऑनलाइन एफसी 11 : ए.आई.आर. 1941 एफ.सी. 16] पर अपने तर्क के समर्थन में भरोसा किए हैं कि संशोधन अधिनियम को विधायिका द्वारा स्पष्ट रूप से या आवश्यक निहितार्थ द्वारा पूर्वव्यापी नहीं बनाया गया था, क्योंकि अधिनियम में स्पष्ट रूप से प्रावधान है कि इसे 23-1-1973 से लागू माना जाएगा; और इसलिए इसे पूर्वव्यापी प्रभाव देने का कोई औचित्य नहीं होगा। श्री सच्चर का तर्क है कि विवाद करने का निहित अधिकार, जो (संपत्ति के) हस्तांतरण होने पर बना और जिस पर न्यायालय में मुकदमा चला था, उसे छीना नहीं जा सकता। दूसरे शब्दों में कहें तो, अपील में चुनौती देने का प्रदत्त अधिकार संशोधन अधिनियम से प्रभावित नहीं हुआ। हालाँकि, इस तर्क को समझने के लिए हमें इसमें शामिल दो अधिकारों, अर्थात् निचली न्यायालय के फैसले के विरुद्ध चुनौती देने का अधिकार और अपील करने का अधिकार, का विश्लेषण और अंतर स्पष्ट करना होगा। इन दो अधिकारों में से, जहाँ विरोध करने का अधिकार प्रथागत अधिकार है, वहीं अपील करने का अधिकार हमेशा विधि द्वारा प्रदत्त होता है। अधिनियम द्वारा अपील के फोरम में परिवर्तन से अपील के अधिकार पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। वर्तमान मामले में हम विरोध करने के अधिकार से संबंधित हैं, न कि अपील के अधिकार से। इसमें कोई विवाद नहीं है कि निहित अधिकारों को

किसी ऐसे अधिनियम द्वारा छीना नहीं जा सकता जो स्पष्ट रूप से या अप्रत्यक्ष रूप से पूर्वव्यापी नहीं है। लेकिन केवल इसलिए कि कोई अधिनियम अपने कार्यक्षेत्र में किसी बीते हुए कृत्य या घटना को शामिल करता है, उसे पूर्वव्यापी कहना आवश्यक नहीं है। ब्लैक लॉ डिक्शनरी के अनुसार, 'पूर्वव्यापी' का अर्थ है अतीत की ओर देखना; बीते हुए समय पर विचार करना; किसी अधिनियम या उससे पहले मौजूद किसी कानून या चीज़ का संदर्भ देना है। इसी शब्दकोश के अनुसार, 'पूर्वव्यापी कानून' का अर्थ है ऐसा कानून जो अतीत की ओर देखता है या अतीत पर विचार करता है; ऐसा कानून जो इसके लागू होने से पहले घटित कार्यों, तथ्यों या अधिकारों को प्रभावित करने के लिए बनाया गया हो। प्रत्येक ऐसा कानून जो मौजूदा कानूनों के तहत अर्जित निहित अधिकारों को छीनता है या उन्हें कमज़ोर करता है, या कोई नया दायित्व बनाता है, कोई नया कर्तव्य थोपता है, या पहले से हो चुके लेन-देन या प्रतिफलों के संबंध में कोई नई अक्षमता जोड़ता है। पूर्वव्यापी कानून का अर्थ है ऐसा कानून जो पहले से हो चुके लेन-देन या प्रतिफलों पर एक नया दायित्व सृजित करता है या निहित अधिकारों को नष्ट या बाधित करता है।

36. हैल्सबरीज़ लॉज़ ऑफ़ इंग्लैंड (चौथा संस्करण, वॉल्यूम 44, पैराग्राफ 921) में हम पाते हैं:

'921. "पूर्वव्यापी" का अर्थ—ऐसा कहा गया है कि "पूर्वव्यापी" कुछ हद तक अस्पष्ट है और इसके एक से अधिक अर्थों में प्रयोग होने के कारण बहुत भ्रम पैदा हुआ है। हालाँकि, सामान्य तौर पर, न्यायालय किसी भी ऐसे कानून को पूर्वव्यापी मानती हैं जो उसके प्रारंभ होने से पहले अस्तित्व में आए मामलों या तथ्यों पर लागू होता है, इस अर्थ में कि यह पहले से किए गए लेन-देन या अन्य पिछले आचरण के स्वरूप या परिणामों को प्रभावित करता है, भले ही केवल

भविष्य के लिए ही सही। इसलिए कोई कानून केवल इसलिए पूर्वव्यापी नहीं हो जाता क्योंकि वह मौजूदा अधिकारों को प्रभावित करता है; या क्या वह केवल इसलिए पूर्वव्यापी हो जाता है क्योंकि उसकी क्रियाशीलता के लिए आवश्यक शर्तों का एक हिस्सा उसके पारित होने से पहले के समय से लिया गया है।'

37. हमारा मानना है कि इस मामले में विधायिका ने परंपरा को खत्म करने के लिए 23-1-1973 को देखा, उससे आगे नहीं और सिर्फ इसलिए कि उस अंतिम तारीख को कुछ विवादों को अचानक खत्म कर दिया गया था, इससे संशोधन अधिनियम पूर्वव्यापी नहीं हो जाएगा। दूसरे शब्दों में, यह केवल इसलिए पूर्वव्यापी नहीं होगा क्योंकि इसकी कार्रवाई के लिए आवश्यक शर्तों का एक हिस्सा संशोधन अधिनियम के लागू होने से पहले के समय से लिया गया था। हमारा यह भी मत है कि "कोई भी व्यक्ति पैतृक या गैर-पैतृक अचल संपत्ति के किसी भी हस्तांतरण या ऐसी संपत्ति के उत्तराधिकारी की नियुक्ति को चुनौती नहीं देगा" का प्रावधान करते हुए, मूल अधिनियम के लागू होने के बाद और संशोधन अधिनियम के लागू होने से पहले किए गए ऐसे हस्तांतरणों या नियुक्तियों को चुनौती देने के किसी भी अधिकार को संरक्षित किए बिना, विधायिका का आशय निहित अधिकार को भी समाप्त करना था; और यह परोक्ष रूप से भी ऐसा ही था। इस बात पर कोई विवाद नहीं है कि किसी अधिनियम को पूर्वव्यापी प्रभाव नहीं दिया जा सकता, जब तक कि विधायिका ने स्पष्ट शब्दों या आवश्यक निहितार्थ द्वारा ऐसा न कर दिया हो। लेकिन इस मामले में ऐसा प्रतीत होता है कि विधायिका का यही आशय था। इसी प्रकार, जब स्पष्ट शब्दों का प्रयोग किया जाता है, तो न्यायालय किसी प्रावधान को पूर्वव्यापी रूप से कार्य करने की शक्ति प्रदान

करने वाला मानेंगे। इन मामलों में हमें संशोधन अधिनियम का उद्देश्य और भाषा दोनों ही स्पष्ट लगते हैं।"

26. उच्चतम न्यायालय ने **हर नारायणी देवी बनाम भारत संघ**¹⁰ के मामले में दोहराया है कि **विनीता शर्मा** मामले में दिया गया निर्णय उन उत्तराधिकारों को प्रभावित नहीं करता है जो 9 सितंबर 2005 से पहले ही शुरू हो चुके थे। नतीजतन, डी.एल.आर. अधिनियम की धारा 50 के तहत पुरुष वंशजों के अधिकार, जो उक्त तिथि से पहले निहित थे, हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 की धारा 4 की उपधारा (2) को बाद में हटाने से अप्रभावित रहेंगे।

27. अतः वादी का यह तर्क कि हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम में 2005 का संशोधन पूर्वव्यापी रूप से लागू होता है और इसलिए डी.एल.आर. अधिनियम के प्रावधानों को अमान्य कर देता है, में कोई गुणागुण नहीं है। सुस्थापित कानूनी स्थिति यह इंगित करती है कि उत्तराधिकार का निर्धारण पूर्ववर्ती की मृत्यु के समय प्रचलित कानून के अनुसार किया जाना चाहिए, और बाद का कोई भी संशोधन निहित अधिकारों को बाधित नहीं करता है।

28. **नरेश कुमार** मामले में, इस न्यायालय की समन्वय पीठ ने पैराग्राफ 6.6 में एक बार फिर **हर नारायणी देवी** मामले में निर्धारित कानून की जाँच की और दोहराया कि जहाँ उत्तराधिकार 09.09.2005 से पहले ही शुरू चुका था, वहाँ डी.एल.आर. अधिनियम की धारा 50 के प्रावधान उत्तराधिकार को नियंत्रित करेंगे, और हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 के तहत दावा कायम नहीं रखा

¹⁰ (2022) 18 एस.सी.सी. 470

जा सकता। न्यायालय ने टिप्पणी की कि जिन मामलों में अधिनियम की धारा 4(2) को हटाए जाने से पहले पूर्वज की मृत्यु हो गई थी, उनमें पुरुष कानूनी उत्तराधिकारियों के पक्ष में विरासत के अधिकार पहले ही अर्जित और स्पष्ट हो चुके थे, जिससे कानून में कोई भी बाद के संशोधन लागू नहीं होते हैं। परिणामस्वरूप, वर्तमान मामले में, चूँकि उत्तराधिकार 09.09.2005 से पहले शुरू हुआ था, इसलिए वादी मृतक की संपत्ति पर किसी भी अधिकार का दावा नहीं कर सकता था, क्योंकि उत्तराधिकार डी.एल.आर. अधिनियम की धारा 50 द्वारा शासित होना था। उक्त निर्णय का प्रासंगिक भाग इस प्रकार है:-

“6.6. वर्तमान मामले में विचारणीय तथ्य, हर नारायणी देवी (पूर्वोक्त) मामले में उच्चतम न्यायालय द्वारा विचार किए गए तथ्यों के समान हैं। वर्तमान मामले में भी, श्री जुग लाल की मृत्यु 25.10.1986 को हुई थी। उक्त कृषि भूमि का उत्तराधिकार इस तिथि को खुला और डी.एल.आर. अधिनियम की धारा 50(क) के अनुसार यह भूमि उनके दो पुत्रों [श्री सरूप सिंह और श्री तदबीर सिंह] को प्राप्त हुई। इस प्रकार, श्री सरूप सिंह और श्री तदबीर सिंह के पक्ष में उत्तराधिकार के अधिकार 25.10.1986 को, 1956 के अधिनियम की धारा 4(2) के 09.09.2005 को हटाने से पहले ही प्राप्त हो चुके थे और निश्चित हो गए थे। इसलिए, उक्त कृषि भूमि में विरासत का कोई अधिकार स्वर्गीय श्रीमती राज बाला को 25.10.1986 को या 1956 के अधिनियम की धारा 4(2) को 09.09.2005 को हटाए जाने पर प्राप्त नहीं हुआ।”

29. वादी के इस तर्क के संबंध में कि संपत्ति 2(ख) और 2(ग) आवासीय प्रकृति की हैं और इस प्रकार डी.एल.आर. अधिनियम के दायरे से बाहर आती हैं, इस न्यायालय की समन्वय पीठ ने **सुभद्रा** मामले में पैराग्राफ 31 में स्पष्ट

रूप से कहा है कि भूमि का वर्गीकरण, चाहे वह पुरानी आबादी हो या विस्तारित आबादी, डी.एल.आर. अधिनियम की धारा 3(12) द्वारा शासित है। न्यायालय ने स्पष्ट किया कि **लाल डोरा** भूमि भी डी.एल.आर. अधिनियम के दायरे में आती है, जिससे इसके प्रावधान लागू होते हैं। निर्णय का प्रासंगिक अंश इस प्रकार है:-

“31. दिल्ली भूमि सुधार अधिनियम की धारा 3(12) के अंतर्गत भूमि की परिभाषा स्पष्ट रूप से परिभाषित करती है कि किस प्रकार की और किस तरह की भूमि को दिल्ली भूमि सुधार अधिनियम के प्रावधानों को लागू होने के लिए भूमि माना जाएगा। कोई भी लाल डोरा भूखंड, चाहे वह पुरानी आबादी में हो या विस्तारित आबादी में, अधिनियम की धारा 3(12) के तहत आता है। इसलिए दिल्ली भूमि सुधार अधिनियम के प्रावधान लाल डोरा भूमि पर भी लागू होते हैं और पहली बार में अपीलार्थी केवल राजस्व न्यायालयों में ही जा सकता था।”

30. नतीजतन, यह तर्क कि प्रश्नगत संपत्तियां अपनी आवासीय प्रकृति के कारण डी.एल.आर. अधिनियम के अधिकार क्षेत्र में नहीं आती हैं, में कोई गुणागुण नहीं है।

31. वर्तमान मामले में, वादी के कथनों के आधार पर, संपत्ति 2(ख) को ग्राम सफ़ीपुर, रान्होला की ग्राम सभा में निहित बताया गया है, जो स्पष्ट रूप से इंगित करता है कि यह आबादी भूमि थी। इसी तरह, संपत्ति 2(ग) को ग्राम सफ़ीपुर, रान्होला की पुरानी आवासीय आबादी का हिस्सा दिखाया गया है। यहाँ तक कि वादपत्र में किए गए दावों के अनुसार भी, संपत्ति 2(ख) और 2(ग), जैसा कि वे वर्ष 1991 में थीं, या तो कृषि भूमि की श्रेणी में आती हैं या पुरानी

या विस्तारित आबादी के अंतर्गत आती हैं। इस न्यायालय द्वारा **सुभद्रा** मामले में निर्धारित सिद्धांतों से यह स्थिति और भी पुष्ट होती है। तदनुसार, सुस्थापित कानूनी स्थिति और वर्तमान मामले पर इसकी प्रयोज्यता को देखते हुए, डी.एल.आर. अधिनियम की धारा 50 के तहत मुकदमा वर्जित है।

32. अतः, सुस्थापित कानूनी स्थिति को देखते हुए, न्यायालय इस मुकदमे में की गई किसी भी प्रार्थना को स्वीकार करने में असमर्थ है। प्रतिवादी ने यह सफलतापूर्वक सिद्ध कर दिया है कि आदेश VII नियम 11 के अंतर्गत सिद्धांतों का पालन किया गया है और वादी के पास कोई वाद हेतुक नहीं है। आदेश VII नियम 11 के तहत न्यायशास्त्र, जैसा कि **दहिबेन बनाम अरविदंभाई कल्याणजी भानुशाली**¹¹ में प्रतिपादित किया गया है, यह अधिदेश करता है कि न्यायालय को यह निर्धारित करना चाहिए कि क्या वादपत्र और संबद्ध दस्तावेज स्वयं वाद हेतुक का खुलासा करते हैं। वर्तमान मामले में, दलीलों और विवाद को नियंत्रित करने वाले कानूनी ढांचे की गहन जाँच करने पर, इस विषय पर स्पष्ट न्यायशास्त्र को देखते हुए, न्यायालय को मुकदमे को आगे बढ़ाने की अनुमति देने में कोई गुणागुण नहीं दिखता है और तदनुसार सी.पी.सी. के आदेश VII नियम 11 के तहत वादपत्र को खारिज करना उचित समझता है।

33. नतीजतन, प्रतिवादियों द्वारा दायर वर्तमान आवेदन मंजूर की जाती है।

¹¹ (2020) 7 एस.सी.सी. 366

सि.वा. (मू.प.) 217/2021 और अंतर.आ. 5406/2021

34. अंतर.आ. 1736/2022 में दिए गए निर्णय के आलोक में, लंबित आवेदनों के साथ वर्तमान मुकदमा खारिज किया जाता है।

न्यायाधीश पुरुषेद्र कुमार कौरव

13 फरवरी, 2025

एन.सी./एस.पी.

(Translation has been done through AI Tool: SUVAS)

अस्वीकरण : देशी भाषा में निर्णय का अनुवाद मुकद्दमेबाज़ के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा। समस्त कार्यालयी एवं व्यावहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेज़ी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।